उपर संहार
समग्र मल्यांकन
उपसंहार

महाकाव्यों की सुदीर्घ परम्परा में ‘भक्ति’ मनोहर एक ऐसा प्रवचनद्वार चरित काव्य है, जिसमें नव्य धारणाएँ हैं, गुण का सांस्कृतिक प्रतीतिवेच है, महान नायकों राम, कृष्ण के महत्त्व जीवन के निरुपण के साथ ही सामाजिक मूल्यों का स्थापन है। जिन मूल्यों पर कवि ने बल दिया है। वे इस प्रकार हैं :-

निधानगिरि की अहिंसा भावना :-

‘भक्ति मनोहर’ की सीता मारीच कथा के प्रसंग में राम से मृग को लाने और उसे पालने का अधिकता है, जो युगान्धर है। हिंसा के विरोध में अहिंसक गाँधीजी की विचार धारा का पोषण है और आजादी के टीक पूर्व लिखे गए महाकाव्य में इस प्रकार के अपेक्षित परिवर्तन युगान्धर है और कवि की सजग और सत्त्व दृष्टि के परिचायक हैं। कवि ‘निधान-गिरि’ की सीता का यह प्रस्ताव विचारणीय है :-

अः “नींक पालवे जोग कृपाला।” ३

(हे कृपाल (कृपा करने वाले, हिंसक न हो) यह मृग सुन्दर है, पालने योग्य है। मारने योग्य नहीं)

“मोहत देखे मृगन की तजसन सर भगवान्।” ३

इसी प्रकार अनुरूपीयता तथा ताकत के अंतर को समाप्त करने और उससे ऊपर उठकर मानवता का संदेश कवि ने दिया है, जो गाँधीजी कविता से प्रभावित है :-

३- “राम सदा अनुराग बस जात पाँि निश्चित चीना।” ३
आर्य सिखान्त, सती प्रथा का विरोध :–

आत्महत्या अथवा सती प्रथाके विरूद्ध आर्य समाज द्वारा जो प्रयत्न किये गए उसकी प्रतिक्रिया ‘निधानगिरि’ में भी दिखाई पड़ती हैं। दशरथ के निधन के बाद रानियों को चिता पर न बैठा कर सती प्रथा का विरोध किया तथा आत्महत्या की प्रकृति को नकारा है, समाज के हित के लिए वैचारिक नवीन जीवन को सेवा तथा वास्तव के क्षेत्र में कार्य करने हेतु प्रारंभ किया है। निधानगिरि की यह दृष्टि आशावादी जीवन के अनुकूल है :–

"जे अधीर मति अति अम्बानी। दुःस्तैं जार कैर बनहानी।" ५

‘निधानगिरि’ ने अपने महाकाव्य को समाज का निमंत्रण बनया है। जब-जब मनमानस की विभिन्न चरित्रों के माध्यम से एक रूपः' बनता है। नेतामाजा के संगठन के लिए आधार भूमि कैसे बनते हैं?

‘निधानगिरि’ विश्व-बन्धुल के गायक :–

‘निधानगिरि’ ने ‘भक्ति-मनोन्नेता’ में नवीन सांस्कृतिक मूल्यों, दार्शनिक तत्त्वों की अभिव्यक्ति की है। राष्ट्रीयता, विश्व-बन्धुल, मानवतावाद का सन्देश दिया है। अवतारों को जन हित में मानव तथा मानवतार रूपों को प्रस्तुत कर लोकहिंट की संचित प्रवृत्तियों को समादृत किया है। कवि की नव दृष्टि भी अनुसंधान करी की दृष्टि में अपना महत्त्वपूर्ण है। कवि ने लोकहिंट, लोकप्रेरण, प्रति-सतत, नर और नारायण में सरस प्रति का आवर्ग प्रस्तुत किया है :–

अ :- "बूख लोक हित कर वर दाया।" ६
ब :- "चर म्या तव प्रस्त्र प्रय जग पावन हित लागा।" ६

कवि ने अथर्म मिटाकर धर्म का विस्तार धरसी बेनु, सुर, मुनि- के दृष्टि का उल्लेख किया है।

स :- "चरम बेनु सुर मुनि दुख दरी।" ९

बेन्ह अथर्म धर्म विस्तारेः।" ९
द :- "हरि अवतार क्यों यह करता।
देव विद्याज्ञ क्रज सम्भार्।” ५
व :- ‘ईशर-ईशर सब जग व्यापक देखी।
सबको हरिमय जान विशेषकी।” ६
र :- ‘भगवत भक्ति मित्र समताई।” ७०
ल :- ‘शिव नारद सनकाविद जैसे।
प्रीति प्रतीत करै जन तैसे।” ७९
व :- ‘सोवत जगत हरि से प्रीति।
नर नाराइन सरस सप्रीती।” ८३
क :- ‘छीड़ जगत सुख करै मिताई।
लोम मोह छल दंभ बिहाई।” ८३
ख :- "पूर्ण भगवत धर्म अनंता।
आइ मनुज मैं हृदि तुर्ता।” ८४

'निशानगिरि’काम्भि और स्वाधीनता के सिद्धान्तक:-

राज्य को अपघात कर सच्चे लोकतंत्र के लिए जनप्रिय एवं साहु विभीषण को राज्य प्रदान करने को प्रस्ताव लोकतंत्रीय विचार का प्रतीक है। लंका विजय करके राम वहाँ का राज्य स्वयं नहीं लेना चाहते थे। वहाँ तो विभीषण को ही राज्य देने का स्वरूप है और वह स्वयं प्रजातंत्र का ही स्वरूप है। कवि ने सीता की उठी के द्वारा लोकतंत्र का स्वयंसेवक सपना भी देखा है :-

“दास विभीषण कनक पुर कब पावेगे राज।
खस अभिलाषा रात दिन पुरैं मन रघुराज।” ८५
कवि ने राष्ट्रीय एकता हेतु रामेश्वरम में शिव की स्थापना करवाई है, जिससे वैष्णव और शैव संस्कृतियों का संगमन हो जाता है। कवि इसे लोकहित की संज्ञा देता है :-

“देशा समद सेतु रघुवीरा। शापे सिर्फुजन कर नीरा।
रामेश्वर तिन नाम बखाना। कहत लोकहित कुप्रा निधाना।” ३६

राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति के लिए कवि ने अपने चरित्र नायक राम को भी अहिंसक बना दिया है। मृग के सौंदर्य को देखकर राम मुश्क हो जाते हैं और उस पर ब्राह्मण नहीं छोड़ते :-

“मोहत देवे मृगन को तजत न सर भगवान।
घोर प्रेम बस होते हैं अस को दया निधान।” ३९

उक्त पंक्तियों में राम मृग पर मोहत हो जाते हैं और धनुष ब्राह्मण चलाना भूल जाते हैं। ऐसे प्रसंगों में महाकवि कालिवास के अभिव्यक्ति आदित्यलम्ब के दृष्टि के बाद आने लगते हैं।

निधानगिरि स्वातंत्र्य चेतना के अग्रदूतः :-

आधुनिक कल में भारतेन्दु से पूर्व राष्ट्रीय जागरण और स्वाधीन चेतना को कथा तथा पात्रों एवं चरित्रों के माध्यम से बयां करने में जिस कौशल का उपयोग कवि ‘निधान गिरि’ ने किया है, वह उन्हें स्वाधीन चेतना के अग्रदूत के रूप में भी प्रतिष्ठित करता है। ‘निधान गिरि’ के काव्य में ‘अभय’ होने का संकेत स्वाधीनता का ही मनोरंजन जानने वाला है :-

“फिरे अभय सब जगत में नहीं कलेव नियराया।” ३५

इतना ही नहीं राम वन गमन के समय पिंज़ों में बंदी पत्थर मुक्त होने के लिए दिखाई देते हैं तथा पराशीन होने के कारण दुःख और पीड़ा का अनुभव करते हैं :-

“रघुवर सुक सारिका पढ़ाये। राहू पीजरन ते फँटताय।
बंदी पक्षियों की यह पीड़ा पराधीनता की पीड़ा है, जो मानवतार जगत से अभिव्यक्त हुई है। स्वतंत्रता की कामना सीता के चरित्र से भी व्यक्त की गई है। भगवती सीता ने अशोक वासिक में हनुमान के माध्यम से राम को संदेश भेजा है कि वो अपने अपनी ही मुक्ति नहीं चाहती बल्कि जो लोकपाल, सुर, नाग, नर, रावण के द्वारा बंदी बनाये गये हैं। राम उन्हें भी बंदी खाने से मुक्त कराने के लिए श्रीधर ही लंका में आये। कवि की ये उद्भवना मौलिक है और स्वाधीनता के जागरण की पृष्ठभूमि को रेखांकित करती है। कवि निधान गिरि के शब्दों में -

“लोकपाल सुर नाग, नर दस सिर बस जग जानि।
बंदी खाने मैं पैरे कब छुड़ाहिं आन।
दस मुख की कब वच हरन सैन सहित परिवार।
निर्मल जस सनकबी मुम्म कब गावहिं विस्तार।”

कवि ने दसों दिशाओं में मुक्ति कब आयेगी तथा निर्मल यज्ञ का विस्तार अर्थात् गायन ओरियों के द्वारा कब होगा? इस कथन के द्वारा पराधीनता के गुरु में स्वाधीनता का स्वरूप संकेत देने वाला है।

काम और भक्ति का बैर भाव मिटाकर चित्रकूट में संधि की योजना, कवि की नौलिक परिकल्पना -

कवि ‘निधान गिरि’ ने चित्रकूट में एक विचित्र संधि का प्रस्ताव कराया है। जहां काम और भक्ति के बीच में एक समझौता होता है। यह संधि राम के निर्देशानुसार होती है। संधि के अनुसार राम ने काम को दिखायी दिया का वर दिया है किन्तु वहें पर एक अनिवार्य शर्त भी है। और यह शर्त इस बात पर है कि काम राम के भक्तों को काम से पीड़ित नहीं करेगा। ‘कामदेव’ ने इस संधि की शर्त को भी स्वीकार कर लिया है वस्तुतः यह सन्धि भक्ति के क्षेत्र में, वर्धन के क्षेत्र में, आध्यात्म के क्षेत्र में एक बड़ी क्षमिति भी है। काम और भक्तों के बीच की यह संधि व्यवहार में भी खरी उत्तरती है। भक्त हनुमान हों, या लक्ष्मण, भरत हों या अन्य भक्त सभी ‘काम’ के प्रभाव से पीड़ित
नहीं होते। वे रामकाज के लिए समर्पित हैं। मदन पानेकों के हदार में राम का ही निवास है, वहाँ काम, सेवा के रूप में ही स्थान का अधिकारी है, अन्यत्र वह महाराज हैं। काम को राम ने महाराजा करना दिया है, किन्तु भक्तों का हदार क्षेत्र उस राज्य की सीमा से मुक्त है यह मुक्त क्षेत्र विचकृत है। भक्तों का विचकृत के समान हैं। जिस दुर्ग पर किसी अन्य राजा का प्रभाव नहीं चलता है।

कवि ‘निधान गिरि’ का यह मनोविज्ञानिक प्रदेश भक्ति के क्षेत्र की एक अन्य विशेष उपलब्धि है। काम व्यक्ति से मुक्त होकर रामकाज, जनसेवा का आदर्श ‘निधान गिरि’ के बक्षित्वत जीवन साधना का भी प्रतिविश्व उपस्थित करता है। आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने वाले, शिव और हनुमान के परम भक्त ‘निधान गिरि’ राम की भक्ति में इस काम को अनुकूल पाते हैं। वह सीन्द्र, प्रेम के मनोरम में स्वच्छता विचरण करते हैं वहाँ न तो कुछ है, न कामजन्य लज्जा। निर्मल अरम्भ में भक्तों के विचरण करने का प्रताप वसूल: किसी भी महान कवि की प्रतिस्पर्धा में कहीं अधिक उपयोगी मूल्यवान सिद्ध होता है।

“मम दासन दुः दीजै नाही। असर जाइ मानी मन माही। कहत मनोज भरो यह नाथा। अब आइस धरही निजमाथा॥” ॥

“भक्तन की करहैं सेवकाई। अस कह मदन रहा वरियाई॥” ॥

ऐतिहासिक सांख्यों की भावति यह अर्थात्मिक संधि कालजी है। राजनीति और इतिहास में अनेक संधियाँ हुयी हैं स्तवं कवि के पिता अनूपगिरि की अनेक राजाओं से संधियाँ हुयी किन्तु काल प्रवाह में ऐसी संधियाँ निर्माण हुयी हैं किन्तु ‘निधानगिरि’ की काम और राम की संधि जो कामदगिरि पर हुयी है। वह सार्वभौम, सार्वकालिक एवं भक्ति साहित्य के हितार्थ एक विश्वजनीन ऋतिकारी संधि है। मानव इतिहास के पटल पर महाकवि, महान भक्त ‘निधानगिरि’ की यह संधि परिकल्पना कितनी महान, ऐतिहासिक और धार्मिक है, इसका मूल्यकन पूर्व भक्ति साहित्य का आलोचना है।

काम और शिव के दंड और अनन्त में शिव के विश्ववंद स्तव के व्यापक परिकल्पना के कारण कवि निधानगिरि का यह विचकृत-संस्कृति का अवधान विश्वसाहित्य के लिए अनुपम विद्युन्न माना जाता है।

विचकृत में ही यह संधि प्रस्ताव क्यों? अन्यत्र क्यों नहीं सम्पादित हुआ। विचकृत विष की स्थली है, प्रकृति की सुरम्य स्थली है। आदिम सम्पत्ति से गुफ्रों वाली संस्कृति वाले विचकृत से ही
राम का वनवास काल जुड़ा हुआ है। वित्तकूट में अस्य श्रृंगार है, प्राकृति का भंडार है, अविनाशी सीन्द्र है। वही इदुन्नुत्र जयंत में कामोदिश होता है। वह सीता के आवरण में वंचु प्रहार करता है। उसे उसके लिए दंडित किया जाता है। यह प्रसंग भी काम के नियंत्रण के प्रश्न को उठाता है।

अपने विषय में काम को ‘कामस्त्रो’ समवर्तताधि मनसो रेतं प्रयासम् यदासीत 33 ‘कहकर’ मन का रेतसु या मूलतत्व कहा है। वात्स्यायन ने अपने कामसूत्र में काम को ऐसी मूल प्रवृत्ति कहा है जिसके बिना जीवन का कोई कार्य नहीं होता है। मनुसूत्र (२-४) में लिखा है कि जो भी कर्म किया जाता है, वह सब काम की ही चेष्टा है तथा शैवालमो में काम को संकल्प, इच्छा एवं सुभिष्ट का उत्थादक, अस्य, अविनाश, स्वभू, समूर्ण संसार का बीज शिवलुप आदि कहा गया है। अतः काम मात्र वासना का होतक न होकर जीवन का उस मूल इच्छा का बोध किया जाता है जो आपे बढ़ने की प्रेरणा देती है। जिससे जीवन के सभी कार्य सम्पन्न होते हैं और जो मानव की उन्नति का मूलाधार है। पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक प्रयास ने काम (लिविको) को मूल शक्ति के रूप में स्वीकार किया है।

श्रेय दर्शन एवं तत्त्वदर्शन 34 को वैश्वदर्शन से संयुक्त करने के कारण ‘निधान गिरि’ ने राम और काम की सीधी की परिकल्पना की है। कि के अनुसार भक्तों को काम मंगलमय, श्रेयकीर्ति क्रयों की ओर ले चलाने में सहायक होगा। उन्हें काम पीड़ित करके वाया नहीं पहुँचायेगा। काम को राम ने विश्वविजयी होने का वर दिया। इसका आशय है कि काम को उपेक्षित नहीं किया जा सकता। वह महाराजा के पद पर है। अतः विश्व को सफल बनाने के लिए यह सत्य आवश्यक है। महाकर्म प्रसाद ने कमायदी में काम के इसी मंगल रूप को विश्व का साधन कहा है :-

“काम मंगल से मंडित श्रेय स्वर्ग इच्छा का है परिणाम।
तिरस्कृत कर उसके तुम भूल बनाते हो असफल भव धामा।” 35
ढा ललित ने भी काम के अनंग रूप को विश्वविवेक कहा है :-

“अंग-अंग में अनंग होकर विश्वविवेक है।” 35

महाभारत में यथा पुष्प पते काष्ठत काम: धर्मस्पर्शो वर: कहकर काम की श्रेष्ठता का प्रतिपादन किया गया है। इसके अतिरिक्त श्रेय ग्रंथों में काम को विश्वसन्न प्रेम एवं सीन्द्र का प्रतीक मानकर कामकला 36 के रूप में उसकी पूजा का विवाह मिलता है और उसे संसार के उत्पादक शक्ति माना है।

309
वैराग्य, संयम तथा भक्ति के क्षेत्र में रचनात्मक कार्य करने वालों के लिए काम की यह अनुकूलता आक्षेपकार है। सेवा, परोपकार आदि शुभकारों के द्वारा श्रेयस्कर जीवन जिया जा सकता है। अतः विवेर के मंगलमय रूप में राम और काम की संधि का यह प्रस्ताव स्वागत करेंगे।

भगवान और मुनियों के बीच के सम्बन्ध का सामान्य धरातल वि-

मानव और भगवान के बीच साम्य की स्थापना महाकाव्य निधानगिरि की भावात्मक कृति मानी जा सकती है। ‘साम्य’ मानववाद की स्थापना करता है। अतः यह जीवन का सशक्त समाजवादी एवं राष्ट्रीय मूल्य है। वैषम्य अस्तित्व भावना को बढ़ाता है। निधानगिरि भगवान को मानव के समान धरातल पर अधिकतम करते है। कवि की निम्न उच्चता में समानता की भावना कितनी मुखर है ?:-

अ— “ईश्वर सम जानी सब प्राणी। बहु विधि की सकल सन्मानी।
बासदेव पद प्रीत लगवै। सुमुर-सुमुर गुज कर मन गच्छै।” २१

ब— “सौवत जागत हरि से प्रीती। नर नारायण सरस सप्रीती।” २६

‘निधान गिरि’ की ईश्वर कल्पना में दार्शनिक और जनवादी दोनों ही प्रकार का वर्तमान है। कवि का मानव प्रेम छलकता है। इसमें आशा और मानवीय आस्था की नई किरणें फूलती दिखाई पड़ती है। मानव का श्रेष्ठता भविष्य प्रतिविर्भित होता है।

क— “पूर्वन भगवत धर्म अनंता। आह मनुज मैं होहि गुरुंता।
ईश्वर सब जग व्यापक देखै। सबकी हरिमय जान विशेष्य।” २६

मानव जीवन को उस विराट सत्ता की छाया मानने वाले महा कवि जायसी ने पदमावत में “पुरुष देख ओहं की छाया का भाव व्यक्त किया है।

‘निधानगिरि’ सख्य-भाव के सरस स्थल वि—

‘सख्य भाव’ की हिन्दी कविता के लिए सूर और चंद दो नाम प्रमुख हैं। सूर ने सख्यावाद का विस्तार किया, चंदने सख्या भाव से चुप और सख्या भाव से चंदसिशी के रूप में कृष्ण की तालुक्य छवियों के माध्यम में बृह और बुद्धदेवी के रसिक किया। ‘निधानगिरि’ रीति के उत्तरकारी, आधुनिक युग के प्रथम जागरण काल के ऐसे महान कवि है, जिन्होंने भगवान को शुच्च मानवीय
धरातल पर उत्तर कर सच्य भाव एवं सचिवालय का उल्लेख परिपक्व करने में रस सिख महाकवियों की कोटियों में विभिन्न होते हैं, सच्य और सचिव भाव का परिपक्व, सहज और स्वाभाविक विमोचन का रसायन निदानगिरि की अनुसूची उपलब्ध है :-

अ- “भगवत भक्त मित्र समताई।” ३०

ब- “छोड़ जात सुश कौ मिताई।” ३१

स- “सच्य कहत कुलवधु सै देखहु रूप अनूप।
. सोभा मूरति राम शिशु के लीने भूप।” ३२

द- “प्रेम मण सुन सपी के मधुर मनोहर बैन।
. झांक झोंकन कुलवधु सानी मूर मेन।” ३३

य- “तबहि अवसर सचिवयाँ कहत चारहु सुल छवि धाम।
. इक अलि कह भक्त सियावर इंगी नील मनी स्थाम।” ३४

‘निदानगिरि’ जयदेव, सूर और तुलसी के संयुक्त संस्करण—

‘निदानगिरि’ ने जयदेव, सूर, और तुलसी, की त्रियों की स्मरण किया है। वस्तुत: ‘निदानगिरि’ पद्मातिल्य, छद प्रवंश, माधव के अभिव्यक्त पद्मक और श्रीमानं, उपालंक, वातत्स्य और अभिनवपुरूषों के सदृश श्रील, संस्कृति के लोकनायक अभिव्यक्त तुलसी है। जयदेव के गीतों से हृदय भर गीत का नाद गुजार और तुलसी का लोकवाक्य एकाक निदानगिरि में प्रतिनिधित्व पाए जाते, यह हिंदी के लिए आपूर्व उपहार है :-

अ :- “नंदन नंद कदम्भक तत तत धीरे धीरे मुरलि जियाओ (जयदेव), गीतगौरविन्द नंदन नंद कदम्भक तत तत मुरलि वजावत भावता।” ३५ (निदानगिरि)

ब :- “नातो ने हारम के मनियत सुहर सुहावृज्ञ जीहों तव (तुलसी)
. धृष्टंत नाती नेह के प्रभु बिन हैं सब बादा।” ३६ (निदानगिरि)

स :- “जैसे उड़े जहाज जो पंक्ति फिर जहाज पर आवे (सूरदास)
. ज्यों जहाज के क्रांत की है अकल्पन आन।
. त्यो भी मैं हूजा नहीं श्री रघुवरी समान।” ३७ (निदानगिरि)

311
निधानगिरि महर्षि व्यास और वाल्मीकि के उल्लासिकारी-

महाकवि ‘निधानगिरि’ ने ‘भक्तमनोहर’ में महान दार्शिकों, व्याकरणवाचलों, सुत्रकारों महर्षियों के साथ महर्षि व्यास और वाल्मीकि के प्रति अप्रवृत्त आश्चर्य व्यक्त की है और इन महान कथा सृष्टियों को अपना कार्यालय माना है। वस्तुतः महर्षि व्यास और वाल्मीकि के सार्वभौम रविशक्षित महाकवि निधानगिरि की वाणी का श्रृंगार और आचरण बनकर ध्वनित हुए हैं। वराट चेतना का सांस्कृतिक दर्पण निधानगिरि में श्रेष्ठतम छवियों के साथ अक्षत है। जो उन्हें महर्षि व्यास और वाल्मीकि का सहब उल्लासिकारी बना देता है:-

अ :- “प्रभु तुम पिता धरान है माता। 

थापिय भूमि जगत सुष्णादाता।” ३८

‘निधानगिरि’ में पृष्ठी (वर्णी) के मातृत्व पर प्रभु के पितृत्व पर सृष्टिक छविया भी परिलक्षित होती है। तवं वर्मिन्ति शिलय पुष्भियां, तवं राय उमयासो जनाए। तवं अतातरे: “चेतो भू: पिता माता 

सद मिनानुसारानु माता” ३६

“सकृदेव प्रणाय, तबासिति च याचेत ।

अभयं सर्वमृतेऽपि हदाप्य तदवत्त मम।” ४०

वाल्मीकि रामायण के अभंग, प्रणाय का प्रतिवेद्व ‘निधानगिरि’ के शरण, निर्भय पदों में 

दृष्टव्य है :-

“कोऊ सरन होई मम ताता। ताकः हि निर्भय पद दाता। 

यह प्रन मोर कहत सत भाज। वाल्मीकि मुनि सम्मत गोँँफा।” ४९
निथानगिरि आचार्यक श्रृंगार के मनोमयम्

श्रृंगार-व्यापारों के विचार में योग्य देखा नयन मंगिनाओं के, पुरवखुशुओं के मनोहास, विलास, रति एवं प्रीति की चौदंडाएं, उदेश्याओं के चरमालक्षण से, उक्तृत कल्पनाओं से मानसिक संचरण, शील और स्वच्छंद के संयंत्र से अभिव्यक्त हुआ है। वह महाकवि के आचार्यक श्रृंगार का अभिव्यक्त प्रस्फुटन है :-

अ :- “कमल नयन अंजन दिया तिलक गुरुचन भाल।
सोह दियोणा कदन विष मन चक्रेर कर लाल।” ॥

ब :- “कसी काँगा कंचन गोदा। कट केहर सिमु तरकस छोटा।
लसी पितः पत्र किचन वन कर। जनु अंजन उमेगावत हियथर।
प्या पैजन अस मन वन करह। सो सुन देत सुकवित पतरह।
सब नजारे निर्देश थो धैर्य। मृग दीपक तज ईकट्ट कैसे।” ॥

स :- “सुदर स्याम गौरव जोरी। सोभा अंगित निरंतां मति भोरी।
देख सप लोचन ललचाएं। जलज माल उर जनु छिवि छाएं।” ॥

द :- “सोभासी कहन सनेह सनाए। स्याम सस्त्र बिरंच बनाए।” ॥

य :- “वाम चाप पूजन कर दोना। तर तर विहर लन के भोला।” ॥

र :- “तहें उमा पूजन की आई। राम लक्षन की निरंत निकाई।” ॥

ल :- “जावक चरन सरोज लगावा जटित जरी जामा पहराव।
कुंडल करन विशेषन अंजन। नाक बुलाक भाल पर चंदन।
सीस जरकसी पाग रचाई। तापर मोर मनोहरताई।” ॥
“योजन परस वेग महतारी। मो की बूँक लगी अति भारी।
परसव कनक धार जलझारी। लाडू शांत शीर गुए डारी।
गूजा शीर कदाश गिन्दौरा। पैरे सीर जलेली जोरा।
मिश्री गरी वदाम समारा। लवक संकुली पुवा सिगारा।
बृजती शाजे पीठा पागा। तीलातवी चावर छवि लागा।
वेसन बीस भांत की लोना। धरे आन भर भर बढ़ु दोना।
सिखरन बासी की शु हवर्फी फेनीज्वार।
नीकी औदो दूध ते भर भर बेला धारा।
मूंग मसूर चना उरद दार अनेक प्रकार।
निवुआ आम अचार बढ़ु मिरच परा दिख दारा।
हैसन हैसन कर असन कहत श्याम अस बात।
भावत मुख अत ही निफट बौरी की पप माता।
दोनी हलदल स्थाम की बेला भर भर माई।
पीवत पप अपतुत राय कवि लघु मति किम गाई॥”

‘निधानगिरि’ ने मो के द्वारा जिन व्यज्जो ने परोसने का उलख किया है, उनमें गूजा, खोर,
कवचव, गिन्दौरा, फेड़ा, तटक, खांड, सिंदाज़, खीर, मिश्री, गरी, बादाम, संकुली, पुवा, अंतरी, शाजा,
पैठा, पाग, तीलातवी, चावल, वेसन बीस प्रकार का नकलयुक्त, सिखरन बासी, बी, खोरा, वरफी,
फेनी, नीदुआ, मूंग, मसूर, चना, उरद, दाल, (अनेक प्रकार की दाल) निवुआ, आम, अचार, मिर्च,
दिख, आदि व्यञ्जन प्रमुख है। बौरी गाय का दूध कृष्ण को अधिक प्रि है।

भोजन के प्रसंग में कवि ‘निधानगिरि’ बुंदेलखण्ड की मिठाइयाँ, पकवान, आचार, दालों,
आदि का नाम परिगणन, कराया है। बुंदेली संस्कृति के अन्तर्गत इनका नामोलख पाया जाता है।
कवि ने यकी नकलयुक्त और ध्वार का उलख किया है किन्तु सभी व्यञ्जन और अन्य खावा वर्तुँ दोनों में ही दी गयी हैं। दोनों का प्रयोग प्राचीन काल से पाया जाता है।
बुंदेलखण्ड में प्रायः दोनों का प्रयोग किया जाता है। सामान्य जनजीवन में दोनों प्रचलित है। कवि रस के प्रवाह में इन दोनों को नहीं भूलता। उसे ग्राम्य संस्कृति से लगाव है और आचारिक क्षेत्रों में दोनों ही प्रयोग किये जाते हैं।
सभी मांगलिक मंगलों की पूर्ति के अवतरण पर साक्षात हो उठते हैं। महाकवि की लोकवाणी के कठ में सरस्वती का कौमायर रस सुपृंग करने लगता है।

अ :- शिशु रूप में राम के झुलने के लिए कामदेव बढ़ती (कारीगर) का झुलना (पलना) उस पर रेशम और हरों का पुंजना, किंकरी और खिलों की सजाया गया है।

"कनक रत्न मय सोहंत पलना। मनुष मदन बढ़त रवि झुलना।
लागे अति किंकरी पिली। बहु विठि जलजहा छवि भीना।" ५५

कवि ने लोक संस्कृति के अनेक प्रसंग का उल्लेख किया है। कविता के कलश शीशपर धारण करके मंगल गायन करती हुई मानिनियों, दूलह का परछन, भुम पूजन, गौरी गणेश का पूजन, गौड़ जोड़ने की रम, मधुपुर्क आर्चान, शाखोच्चार, कल्याण का उल्लेख कवि ने किया है। जिससे कवि का मांगलिक ज्ञान पुष्प होता है।

अ :- "कंचन कलस सिर धर्रे माभिन सकत मंगल गायत।" ५६

ब :- "हूलह निरस परछन करत जुळ आरती कर भावल।" ५६

स :- "अरचन प्रथम कर भूम की गवरी गनेस पुजावही।" ५६

द :- "भुति गांठ जोर प्रमोद हिय कह भीवरी शुभि विच मयी।" ६०

य :- "भुपुरक आदिक वेद विद्वकर समय मुनिवर जान के।
बुलवाई रानी गांठ जोरी जनक देहु सुप सोन कै।" ६३

र :- "कलशीत धार पपहर प्रभु पद प्रेम जुळ उर धार कै।" ६२

ल :- "तिथि समय सावोच्चार कर दुहु कुल गुरुन विस्तार कै।" ६३

प :- "सव वेद विव मिथलेस कल्याण वर कर गह दीयो।
पुष चुहार आसी आहुः कर हुतासन पूर्ण किया।" ६४

ष :- "पावक आदिक देव, पूजा पाई असीस दिय।
प्रमुदित है गुर सेव, आप कृतार्थ जान कै।" ६४

ब्यौजन- लोक संस्कृति के अन्तर्गत कवि ने ब्यौजनो का भी उल्लेख किया है। ब्यौजनो की परिगणना
कवि ने इस प्रकार की है :-

315
“भोजन परस वेग महतारी। मो की भूलक हरी अति भारी। परसव कनक धार जल्जारी। लाहू शांड छीर पृत पारी।
गूजा शोर कदाश गिदीरा। पैरो सीर जलेबी जोरा।
मिश्री गरी बदाम समारा। लवन संकुली पुवा सिगारा।
बृहती शाजे पीठा पाग। लीलावती चावर छवि लागा।
वेसन बीस भान्त की लोना। धरे आन भर भर बहु दोना।
सिकशर वासी धी शुधा बरफी फेनीचार।
नीकी औरो दृष्ट ते भर भर बेला धार।
मुंग मसूर चना उरद दार अनेक प्रकार।
निचुआ आम अचार बहु मिरच परा दंपि दार।
हौसन हौसन कर असन कहत श्याम अस बात।
भावत मुह अत ही निपट बौरी की पप माता।
दोनी हल्दल स्याम कीं बेला भर भर माई।
पीवत पप असुन्त करत कवि लघु मति किम गाड।”

‘निधानगिरि’ ने मो के द्वारा जिन व्यजनों के परेसने का उलेख किया है, उनमें गूजा, खोर, कदाचर, गिदीरा, पेड़ा, लड़ू, खांड, सिमाड़ा, खीर, मिश्री, गरी, बादाम, संकुली, पुवा, अग्न्ती, शाजा, पैठा, पाग, लीलावती, चावर, वेसन बीस प्रकार का नमकुक्त, सिकशर वासी, धी, खीरा, बरफी, केनी, औदायुष्म, मुंग, मसूर, चना, उरद, दाल, (अनेक प्रकार की दालें) निचुआ, आम, अचार, मिच्र, दंपि, आदि व्यंजन प्रमुख है। बौरी गाय का दृष्ट कुष्टा की अवध क्रिया है।

भोजन के प्रसंग में कवि ‘निधानगिरि’ बुदेलखण्ड की मिठाईयों, पकवानों, आचारों, दालों, आदि का नाम परिगणन, कराया है। बुदेली संस्कृति के अन्तर्गत इनका नामोलेख पाया जाता है। कवि ने यदापि कनकमश सारी का उलेख किया है किन्तु सभी व्यंजन और अन्य खात्र वस्तुंगे दोनों में ही दी गयी हैं। दोनों का प्रयोग प्राचीन काल से पाया जाता है। बुदेलखण्ड में प्रायः दोनों का प्रयोग किया जाता है। सामान्य जनजीवन में दोनों प्रचलित है। कवि रस के प्रवाह में इन दोनों को नहीं भूलता। उसे ग्राम्य संस्कृति से लगव है और आधुनिक क्षेत्रों में दोनों ही प्रयोग किये जाते हैं।
लोकसंस्कृति

परिणाम-आमूँण

कवि ‘निघानगिरि’ ने लोक संस्कृति के संरक्षण के लिए विविध परिषानों एवं आमूँणों का उलेख करके लोकसंस्कृति के प्रति आरोप व्यक्त की है-

“कसैं काङ्नी कवचण ्गोट। कट केहर सिसु तरक्कस छोटा।
लसैं शीत पट क्विकन धुनकरा। जनु अरद उमगावत डिय धरा।
पण चैनन अस मन भुन करही। सो गुन देत सुकवि पटतरही।
जनु प्रभु सैं मागत वर ऐह। सदा रैहं पद पंकज नेही।
सिर टोपी जरक्स की सोही। पददकहार छवि जनमण मोही।
भुज अंगद पहुँची माण मंडित। कुंडिल करन भान छवि पढित।
सब नर नार निरंज थक औसै। मृग दीफक वर इकट्टक जैसै।”

काङ्नी में कवचण गोट, पीतपत में फिक्नी, पण में चैननी, सिरपर जरक्सी टोपी, पददक हार,
भुजाओं में अंगद, पहुँची माण मंडित, कवचण में कुंडल जो सूर्य की छवि को खडित करने वाली है।
इस छवि को नर नारी के प्रकार निरंज वर इकट्टक जैसै।

‘निघानगिरि’ ने लाल लहंगा (लाल रंग का लंबरियादा लहंगा और पंवरंगी साड़ी का उलेख
किया है :-

“जेहरपद कर लाल लहंगा। विपत अंग सारी पंचरंगा।”

गृह्य ताल रागादि का वर्णन :-

‘निघानगिरि’ के तालों का ज्ञान था, उन्होंने ब्रह ताल, सुरताल तालो का और स्पष्ट उलेख भी
किया है। जिससे कवि का लोक संगीत, रागों और तालों के प्रति शास्त्रीय प्रेम व्यक्त होता है।

“भोज्जह बुजवाल भाल गावत कर देत ताल,
ब्रह ताल सुरताल ताठ अग्नि तन सेहारी।
शकित पवन लता पुंज मोहत मन कुंज-कुंज
कलिदी फूल मंजु मुरली पुंज धारी।

317
दुम-दुम पन धरत धरत तारपड़ हरि गृह करन
स्यामंजलज धरक व्युष पीत चंचलारी।
विचुरे सिर भिकुर जाल किंकित धुन ठुकुर चाल
नुपुर झनकर ताल मुकुट लटक न्यारी।
निर्तन गोपी गुपाल नाना विश करत ध्याल
ठानत पद बंद गृह प्रमुदित प्रमुदारी।”

संगीत यंत्र—
कवि निधानगिरे ने ‘भक्तिमोहर’ महाकाव्य के माध्यम से वाच्यंत्रों की अन्वयकरी दी और इन विश्वास वाच्यंत्रों के नाम इस प्रकार हैं :-
“ढोल नदीर हूर नृत्ताना। जल तरंग मुख बंग उदंगाना।
कर तंबूर सितार ढंफ सारंगी मंजीरा।
तासा झांझ खब्जुज नरसिंह सुरमीरा।”
कवि की दी गयी सूची में ढोल, नगढ़ा तुरंगी, मृगंगा, जल तरंग, मुखंगंग, उपंग, तंबूरा, सितार, ढंफ, सारंगी, मंजीरा, तासा, झांझ, खब्ज और नरसिंह के उल्लेख पाये जाते हैं। नृसिंह वाच्यंत्र कुर्णेलखण्ड क्षेत्र का अपना विशेष वाच्य-यंत्र है। जिसके माध्यम से कवि ने बुद्धेली संस्कृति के प्रति अनुराग व्यक्त किया है।

मंगल के अंग—
कवि निधानगिरे ने ग्राम्य संस्कृति, बुद्धेली संस्कृति के साथ ही लोक संस्कृति के रंग भी उपारे हैं। कवि ने मंगल के अंग का भी उल्लेख किया है। जिसके चालिस प्रकार बताये हैं :-
“चालिस विष मंगल के अंग। तोर्न बंदनार नृत्ताना।
कलस चंद्र हुहु हेत पताका। छसु मुझन सुमन फल पाका।
चंदन दूष दूष गृह उप धीरा। आकाश जसव पताक समीपा।
मूसूर रंगा नृत्त विताना। हरदी पंच फलव ललिताना।

318
कदमति चौक मनि अंकुर रोपन। मुकुट बहुर वसा जुत गोवन।
मागव वंदी जन जुत सूता। सजा अना चतुरंग बहुता।
धिमम कन्या जलवर स्वूपा। पान वेद घुन होइ अनूपा।
मंगल साज सजे सकल मुनि रजाई जस पाई।
अवच व्यापण हो रही नम छूतल मै छाई।
झालर मनि जटित अति रुरी। गृह-गृह सिल मनि चौकन पूरी।
सजे कलस जव अंकुर भाए। दर दर पर मनि दीप सुहाए।
धुजा पताका चित्र समेता। फरहरात नम सकल निकेता।
तोरन वंदवर सजो है। रेसम रज नव पथवाग गोहिह।”
शकुन एवं अपशकुन- कवि ने शगुन एवं अपशगुन का उल्लेख भी महाकव्य में किया है, जो इस प्रकार है-

“भेष प्रलय सम करत गराव। वरशत रचिर तपत भवसात।
प्रतमा श्रवहि नीर सब काला। चलत सब यह सुनत कराला।
बोलत स्वान श्रगाल दिनाही। पीत पीतं सब दिसन दिशाही।
सुरभी के उपजत शर भूरा। होत नकुल कै मुसक पूरा।
तहें तहें लरत विविध मंजारी नाग गरज से रोर तरारी।
अपशगुन अपर न जाई बयाने। सकल प्रजा जित तितमय मानै।”

राम के आयतन के पूर्व कौशल्य की प्रतीक्षात चिंता अवक्त मार्मिक हैं। उस समय के शकुनों का वर्णन भी मनोवैज्ञानिक है।

“बाथे पूरब बोलत करा। अग्र चौन त्रिय सहित सुहागा।
बालक तिये गोद मै आवत। दक्षिण सौ स्वालिन ध लावत।
नैरित मैं पूरा भ्रम अनंता। पंचम देश करी किलकता।
तीमानी बार छवि शाना। कोविद पुसतक कर ईसान।
नम निर्मल वह विविध समीता। धरणी हरित मई मुनि धीरा।
देख सगुन सुम रानि सपानी। प्रेम पुलक तन मानस वानी
भिलहे राम लषण प्रिय सीला। जोन सगुन हिय भई सप्रीता।
बाइस बोलत सुभ दिसा सगुन जान कह बैन।
आवहिनी कव कुसल से बालक मम छवि औन।"
राम के आगमन अवधि पर माँ ज्योतिषियों से आगमन के बारे मे पूछती है।
"अचानक निकट लप अति विकल बोल ज्योतिषिन लीन। पूजन कर बौद्ध लगी कही कृपाल प्रवीन।"
वस्तुतः महाकवि निधानगिरि लोक-कलाओं, लोक-आसाथाओं एवं लोक-मान्यताओं से भलीभलति परिचित है।
उनके काव्य का लोक पश्च भी अत्यन्त सशक्त है।

संदर्भ-संकेत
7 भक्तमनोहर, चं. शो. सं. प्रति, निधानगिरि, पृ. 102
2 तदापरिवर्त, पृ. 24
3-29 तच्छपित, पृ. 106, 198, 5, 7, 8, 6, 99, 91, 92, 93, 94, 95, 928, 929, 926, 62, 915, 89
22 चन्द्रवेद, 10, 126, 41, 1-2
23 तंत्रलोक, भाग-3, पृ. 147-159
97 क्रमावध, जयशंकर प्रसाद, श्रद्धा सर्ग, पृ. 2-6
98 अभिशर्त-शिला, डॉ. चन्द्रकान्त प्रसाद दीक्षित 'ललित', काम सर्ग, पृ. 38
96 काम कला विलास, अध्याय ८
91 तन्त्रमनोहर, चं. शो. सं. प्रति, निधानगिरि, पृ. 25
29-38 तदपरिवर्त, पृ. 99, 99, 93, 99, 95, 96, 96, 992, 928, 925, 97
38 क्रमो ६ / 19 ५
40 वातनकर कामायण, युवकांड, 18/33
49 'भक्त मनोहर', चं. शो. सं. प्रति, निधानगिरि, पृ. 149
42-46 तदपरिवर्त, पृ. 53, 75, 75, 52, 54, 62, 63, 63, 63, 63, 74, 44,
64, 54, 52
50-65 तदपरिवर्त, पृ. 72, 74, 74, 74, 74, 74, 74, 74, 74, 74, 74,
66-73 तदपरिवर्त पृ. 94, 97, 97, 97, 97, 97, 97, 97, 97, 97,